The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 5 | May 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

भारतीय इतिहास लेखन की क्षेत्रीय परम्पराएँ

मनोज सिंह

शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरैना, मध्यप्रदेश।

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20699487

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 26-05-2026

Published: 10-06-2026

Keywords:

क्षेत्रीय इतिहास लेखन, बखर, बुरंजी, ख्यात परम्परा।

ABSTRACT

भारत में इतिहास लेखन की क्षेत्रीय परंपरा प्राचीन काल से ही प्रचलित रही है। मध्यकाल तक आते-आते कुछ क्षेत्रीय भाषाओं का विकास हुआ। इन क्षेत्रीय भाषाओं में अपने-अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हुई साहित्य एवं ऐतिहासिक साहित्यिक लेखन द्वारा क्षेतीय इतिहास लेखन को बढ़ावा मिला। जिससे महाराष्ट्र में इतिहास लेखन की बखर परंपरा, राजस्थान में इतिहास लेखन की ख्यात परंपरा, असम में इतिहास लेखन की बुरांजी परंपरा, गुजरात के इतिहास लेखन की वहीवाच बारोट परंपरा, ग्वालियर-चंबल क्षेत्र की गोटिया इतिहास लेखन परंपरा, विभिन्न धार्मिक केंन्द्रो में प्रचलित तीर्थ वंशावली इतिहास लेखन परंपरा आदि का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। क्षेत्रीय इतिहास लेखन की विभिन्न परंपराओं की ऐतिहासिक विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि भारत का इतिहास छोटी बड़ी राज्य की स्थानीय इतिहास की समन्वय से ही पूर्ण हुआ है इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत की प्रतिक राज का अपना गोरखपुर इतिहास है जो एक दूसरी से परस्पर संबंध है अतः इस तत्व को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि क्षेत्रीय इतिहास लेखन की विभिन्न परंपराओं का अवलोकन एवं विश्लेषण करने की पक्ष ही भारत के वास्तविक इतिहास का निरूपण हुआ है।

प्रस्तावना:-

मौखिक परंपरा और लिखित ग्रंथों में मौजूद ऐतिहासिक चेतना क्षेत्र विशेष की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है जिसे निरंतर आगामी पीढ़ियों को हस्तातंरित कर सुरक्षित बनाए रखा जाता है। हमारे अतीत का प्रत्येक रूप वर्तमान के लिए महत्व रखता है, इसकी वैधता और स्थायित्व को सुनिश्चित करने के लिए उसे विशेष महत्व दिया

जाता है। किसी एक प्रकार की स्वरूप से दूसरी स्वरूप का कोई क्रमिक या निर्धारित विकास नहीं होता है और अंतर्गत चेतन की कई पहलू दूसरी किसकी ऐतिहासिक चेतना में भी देख जा सकते है।(थापर, 2000,124)

लोकप्रिय स्मृति में ऐतिहासिक चरित्रों को नया रूप प्रदान करने और घटनाओं को एक बिल्कुल अलग ही दृष्टिकोण में वर्णित करने की क्षमता होती है। औपनिवेसिक शासन के पूर्व से ही भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में क्षेत्रीय परंपरा का विकास हुआ। उदाहरण स्वरूप मुगल शासन के विरुद्ध मेवाड़, मराठा, सिख, जाट आदि का प्रतिरोध जिससे क्षेत्रीय नायकों का उदय हुआ। इन नायकों ने सफलतापूर्वक साम्राज्य के उन अधिकारियों को चुनौती दी जो आततायी तथा शोषक थे।(सिंह, 2018,5-6)

इतिहास लेखन की बुरांजी परंपरा-: बुरांजी परंपरा को मध्यकालीन असम के अहोम शासन से घनिष्ठ रूप से जोड़ा जाता है, किंतु समय के साथ-साथ बुरंजी परंपरा हम राज्य की इतिहास का प्रतिनिधित्व करने लगी इसका कारण असम में अहोमों के आगमन से पूर्व शासन करने वाले वंशो के बीच इतिहास लेखन की परंपरा की अनुपस्थिति है। हम पहले से मौजूद कई निर्जातीय और सांस्कृतिक समूहों के साथ अंतर मिश्रित हुई और इस प्रक्रिया में उन्होंने विभिन्न गैर-अहोंम सांस्कृतिक तत्वों को भी अपनाया। अहम शासन 1228 ई. से 1826 ई. के मध्य लगभग 600 वर्षों तक कायम रहा और इस लंबे कला में वह नृजातीय रूप से भिन्न और शक्तिशाली समूह को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने में सफल हुए एवं उन्हें साम्राज्य का हिस्सा बना लिया गया।

एक संस्थागत ऐतिहासिक परंपरा के रूप में बुरांजी सरकारी या निजी स्वयं में सामाजिक और राजनीतिक प्राधिकार के रूप में कार्य करने की क्षमता रखती थी। आधुनिक काल में असम की बुद्धिजीवियों द्वारा आसामी पहचान के पुनर्निर्माण में इसकी निर्वाचन और उपयोग ने यह दर्शाया है कि किस प्रकार ऐतिहासिक परंपरा को लोकप्रिय बनाकर एक क्षेत्रीय राष्ट्रवादी भावना का विकास संभव है। बुरंजिया 1228 ई. से 1826 ई. तक असम में शासन करने वाले अहोंम राजवंश की ऐतिहासिक इतिवृत्तों की एक शैली है और असम के पूर्व-औपनिवेशिक इतिहास की समझ मुख्यता इन बुरांजियों पर ही आधारित है।(डेका, 2016)

बुराँजिओ को प्रारंभिक रूप में ताई-अहोंम भाषा में लिखा गया था लेकिन बाद में इनमें से अधिकांश की रचना असमी भाषा में हुई। बुरंजियां शब्द जिसे आज इतिहास का पर्यायवाची माना जाता है, आसामी भाषा में इतिहास शब्द का प्रयोग प्राचीन के लिए थाई शब्द बोरान से आया है।(हार्टमन, 1997) बुराँजी की प्रकृति का अन्य रोचक पूर्ण वर्णन जॉन पीटर बेड द्वारा असम की इतिहास के संकलन में मिलता है जो एक राजकीय आदेश का संदर्भ देता है कि राजा के पूर्वजों की इतिहास को लिखा जाना चाहिए......असम राजाओं के नाम और मृत्यु का उल्लेख होना चाहिए।(पुरकायस्थ, 2008)

राजाओं और राज्य की उच्च अधिकारियों की राजकीय आदेशों पर लिखी तथा संकलित किए गए इन (बुरँजिओ) इतिवृत्तियों की शैली न केवल हमें अहोंमों के वंशानुगत इतिहास की जानकारी देती है बल्कि हमें असम में इतिहास लेखन की एक विशिष्ट शैली के विषय में भी बताती है जो पूर्वी तथा दक्षिण पूर्वी एशिया की ऐतिहासिक परंपरा की समान है इस प्रकार बुरांजी की विशिष्ट विशेषता हम की राज दरबार के भीतर और बाहर घटित महत्वपूर्ण घटनाओं के विवरण को दर्ज करना है, यही कारण है की बुरंजी इतिहास की बजाय राजाओं का इतिव्रत अधिक नजर आता है। बुरांजियों का संग्रहण ब्रिटिश प्रशासको द्वारा प्रारंभ किया गया। बुरंजिओ का उपयोग केवल कुछ बुजुर्ग देउ (पुरोहितों) द्वारा समारोह और अनुष्ठानों की उद्देश्यों के लिए किया जाता था इन देउ को ब्रिटिश सरकार में बुरांजियों को चयनित, व्यवस्थित और प्रस्तुत करने का काम सोपा था। (गैटे, 1933)

सूर्यकुमार भूयान द्वारा असम के इतिहास के पुनः निर्माण में सहायता करने हेतु कई महत्वपूर्ण बुरँजियों का चयन कर उन्हें व्यवस्थित और संपादित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया। 1914 ईस्वी में हेमचंद गोस्वामी को असम के विभिन्न भागों में बिक्री हुई पांडुलिपियों को संग्रहित करने के लिए नियुक्त किया गया था। कुछ प्रमुख बुरँजियों में देवधाई बुरंजी, कामरूपोर बुरँजी, पादशाह बुरँजी और त्रिपुरा बुरांजी आदि शामिल है।

इतिहास लेखन की बखर परंपरा-: मराठा राज्य व्यवस्था की निर्माण में बख़र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि वह कई महत्वपूर्ण घटनाओं को दर्ज करते है। इनमें से कुछ मराठा कल की प्रमुख राज्य अधिकारियों की जीवनिया है यदपि बख़र किसी निष्ठावान अधिनिस्थ द्वारा अपने शासको के प्रति लिखी गई रचनाओं प्रतीत होती हैं। इस प्रकार वंशात्मक पहचान क्षेत्रीय गौरव की साथ मिलकर और उस पर आधारित होकर एक सामूहिक गोरव पूर्ण अतीत का निर्माण किया।(गुहा, 2019,106)

बख़र गद्यात्मक ऐतिहासिक आख्यान है जिन्हें 16वीं शताब्दी में रचित किया गया था लेकिन इनमें से अधिकांश बकर की रचना 17वीं शताब्दी की उत्तरार्ध में लेकर आरंभिक 19वीं शताब्दी तक हुई है। (देशपांडे, 2007,20) बख़र की संख्या लगभग 200 है, जो प्रमुख शासको की जीवनियों, प्रधान परिवारों की वंशावलियों या प्रमुख युद्ध के विवरणों के रूप में लिखी गई है। बख़र को मराठी की एक गद्य शैली के रूप में जाना जाता है जिसमें वास्तविक ऐतिहासिक मूल्य से अधिक साहित्यिक गुण प्रबल है।

बखर शब्द की उत्पत्ति के संबंध में कुछ विद्वानों का मानना है कि बख़र अरबी शब्द खबर सी व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अभिप्राय सूचना या जानकारी से होता है। इस मत का प्रतिवाद करते हुई एस. एन. जोशी लिखते हैं कि बख़र अधिकांश ग्रंथो के अंत में आता है, संभव है कि बख़र की उत्पत्ति फ़ारसी शब्द खैर या बख़र से हुई है। इन सब

के अलावा कुछ विद्वानों का मत है बख़र का अनुवाद आख्यायिका है जो खबर अर्थात वार्ता या समाचार से भिन्न है और इसकी उत्पत्ति पुरातन पौराणिक आख्यायिका से हुई है।(देशपांडे, 2007,21)

सुमित गुहा के अनुसार स्थानीय घटनाओं और जानकारी को दर्ज करने वाली तथ्यात्मक विवरणों का उदय अधिकारी वर्ग की शक्ति के दोहरी संदर्भ में हुआ था प्रथम था मराठा शासन ने 1650 की दशक में सीमांत क्षेत्रों पर विजय पाने के बाद स्थानीय जानकारी जुटाना शुरू किया ताकि किसी क्षेत्र विशेष की करो के दरों और प्रशासनिक व्यवस्था की विषय में सूचनाओं को एकत्रित किया जा सके। द्वितीय, अतीत की यह विवरण मध्यकालीन महाराष्ट्र की कानूनी कचहरियों में पैतृक संपत्ति संबंधी कानूनी विवादों को निपटने के लिए महत्वपूर्ण हो।(गुहा, 2004)

स्थानीय विवादों की सुनवाई जैसा की आंतरिक ने संकेत किया है अधिकांश तथा स्वभाव गोत्र सभा मजलिस इत्यादि में होती थी इन न्यायिक प्रक्रियाओं ने परिणाम स्वरुप विरासत में मिलने वाली अधिकारिता के संदर्भ में एक विमर्श को जन्म दिया और इस प्रकार प्रखर निर्जती गौरव स्थानीय भूषण द्वारा की गई क्षेत्रीय प्रभुता की दावों के अनुकूल बैठते थे।(देशपांडे, 2007,20)

प्रमुख बखर हैं-सभासद बखर, चिटनिस बखर, पेशव्यांची बखर आदि। सभासद और चिटनिस बकर शिवाजी के जीवन चरित्र का रेखा चित्र प्रस्तुत करते हैं। शासको के जीवन चरित्र की रचना करने के अतिरिक्त बकर प्रमुख परिवारों की वंशावलियों तथा महत्वपूर्ण युद्ध की वृतांतों को भी शामिल करती हैं। भले ही इसकी ऐतिहासिकता बहस का विषय रही हो, तथापि एक क्षेत्रीय वृतांत अतीत की संबंध में साहित्यिक अलंकारणों के माध्यम से रचनात्मक कल्पना का उपयोग करती हुए, एक वैकल्पिक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते है।

इतिहास लेखन की ख्यात परंपरा:- भारत में इतिहास लेखन की परंपरा प्राचीन काल से ही प्रचलित रही है मध्यकाल तक आते-आते कुछ स्थानीय भाषाओं का विकास हुआ। इन स्थानीय भाषाओं में अपने -अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती हुई साहित्य एवं साहित्य इतिहास का विकास आरंभ किया। मध्य पश्चिमी भारत के एक वृहद क्षेत्र का प्रतिनिधित्व उस समय राजस्थानी भाषा कर रही थी राजस्थानी भाषा का विकास 9वीं 10वीं शताब्दी के मध्य आरंभ हो गया था राजस्थानी भाषा की विकास यात्रा का अध्ययन करने से पता चलता है कि इस साहित्य की विषय वस्तु की केंद्र में प्रमुखता ऐतिहासिक पात्र एवं घटनाएं ही रही हैं।

ऐतिहासिक राजस्थानी साहित्य की एक इतिहास संदर्भित विद्या का विकास 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ जिसे यहां के रचनाकारों ने आगे चलकर ख्यात नाम दिया। यदपि वात, बिगत, वंशावली, हाल, हकीकत, रासों, विलास, वचनिका आदि विधाएं भी राजस्थानी साहित्य में इतिहास का प्रतिनिधित्व कर रही थी, परंतु ख्यात इतिहास के संदर्भ में इन सब का अधिक परिक्रष्ट एवं विकसित रूप था। ख्यात शब्द मूलतः संस्कृत का शब्द है ख्या धातु से ता प्रत्यय जोड़ने से ख्यात शब्द बना है, जिसका अर्थ है भूतकाल की घटनाओं का वर्णन भूतकाल को ज्ञात

करना। ख्यात शब्द का राजस्थानी भाषा में प्रयोग कब एवं किस संदर्भ में प्रारंभ हुआ इस प्रश्न पर विद्वानों में मत विभाजन देखा जा सकता है। परंतु यह तो स्पष्ट है कि समकालीन ख्यातकरो ने ख्यात शब्द का प्रयोग इतिहास की रूप में ही किया था।

ख्यात शब्द का प्रारंभिक उल्लेख आठवीं-नौवीं शताब्दी के कवि मुरारी जी की रचनाओं में मिलता है परंतु 16वीं शताब्दी से प्रमाणिकता प्राप्त ख्यातों का लेखन प्रारंभ हो जाता है। ख्यात साहित्य की रचना राव चूड़ा के मंडोर पर अधिकार और राव जोधा के जोधपुर की स्थापना के साथ शुरू हो जाती है। राजकीय ख्यातों के लेखक राजकीय कर्मचारी, पंचोली आदि लिखे लोग थे। इनके अलावा कुछ व्यक्तियों ने स्वतंत्र रूप से भी ख्याति लिखी। नैंसी दयाल दास और बाक़ीदास के नाम विशेष महत्वपूर्ण है इनकी खेतों का महत्व ऐतिहासिक ही नहीं साहित्यिक भी है।

मध्यकालीन एवं आधुनिक राजस्थान की विशुद्ध इतिहास की निर्माण में ख्यात साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है यह भी ठीक है कि ख्यातों के अधिकांश लेखक राजाओं के परंपरागत मुसाहिब थी और उनका एकमात्र लक्ष्य अपनी शासन की यशोगाथा का वर्णन करना था, फिर भी राजपूत राज्यों एवं उनकी शासको के बारे में जो जानकारी फारसी में लिखित ग्रंथो में नहीं मिलती वह ख्यात साहित्य में उपलब्ध होती है जिनके माध्यम से विशुद्ध इतिहास की रचना की जा सकती है।

इतिहास लेखन की वहीवांच बारोत परंपरा :- मध्य तथा उत्तर गुजरात में भाटो की समूह से वंशावली रचने वालों की एक विशेष समुदाय का उदय हुआ जिसे वही वांच बारोट के नाम से जाना जाता था। वही वांचा बारोट लिखित रूप में अपने दस्तावेजों को रखते थे

शाब्दिक रूप में वहीवांचा का तात्पर्य बही/ वही को बाचने या पढ़ने वाले से है। शाह और श्रॉफ द्वारा देखी गई सबसे पुरानी वही 1740 ई से संबंध रखती है, लेकिन उन्हें ऐसी भी वंशावलियां प्राप्त हुई हैं जो 1234 ई तक की पुरानी घटनाओं की जानकारी प्रदान करती हैं। यही वंशावली काल्पनिक प्रतीत नहीं होती है क्योंकि इसमें वर्णित जानकारी की पुष्टि उस गांव में मिली अभिलेख से की जा सकती है। वही वांचा के दस्तावेजों में संरक्षकों के मध्य पुश्तैनी संपत्ति का विभाजन, पूर्वजों की मृत्यु, सशस्त्र संघर्ष, संरक्षण को द्वारा किया गया विशाल भोज, शासको द्वारा संरक्षक परिवार को प्राप्त सम्मान, भूमि की क्रय-विक्रय एवं संरक्षण के परिवार की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन मिलता है। इस प्रकार वही वांचा की बहिया अपने संरक्षको के सामाजिक संस्थाओं तथा मूल्य के विषय में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध कराती हैं।

इतिहास लेखन की गोटिया परंपरा-: गोटिया इतिहास लेखन परंपरा का प्रचलन ग्वालियर-चंबल अंचल में रहा है। गोटिया जैसा कि नाम से ही ज्ञात होता है गोटिया का संबंध गोत्र परंपरा से होता है। गोटिया एक विशेष गोत्र की वंश परंपरा का लेखा-जोखा रखने वाला व्यक्ति होता है। इस क्षेत्र में प्रत्येक गौत्र का एक गोटिया होता है जिसे गोटिया

महाराज कहते हैं। गोटिया वंशावली से संबंधित बहियाँ रखते हैं और गायन के माध्यम से वंशवाली का व्योंरा प्रस्तुत करते है। गौत्र में किसी नए सदस्य(जन्म या वधु)के आगमन पर नाम जोड़ने की वह दक्षिणा,सीधा आदि प्राप्त करते है जिसको वह अपनी बहीं में लिपिबद्ध करते हैं। इन गोटिया महाराज का केंद्र अजमेर होता है। यह कई पीढ़ियों तक की वंशावलियां अपनी बहियों में सुरक्षित रखते है।

इतिहास लेखन की तीर्थ वंशावली परम्परा-: तीर्थ वंशावलियों को भारत के विभिन्न तीर्थ स्थान में ब्राह्मण, पाँडो द्वारा दर्ज और व्यवस्थित किया जाता था। हरिद्वार, प्रयाग, पुरी आदि ऐसी विख्यात केंद्र हैं जहां हमें इस तरह की परंपरा देखने को मिलती है।

भारतीय संस्कृत में तीर्थ यात्रा को एक धार्मिक कर्तव्य माना जाता है। मंदिर, नदियों, पर्वतों, सागरों के आसपास केंद्रित विभिन्न तीर्थ स्थान है और इन स्थानों में अनुष्ठानों का निष्पादन तीर्थ पुरोहितों द्वारा किया जाता है। इनमें से कुछ स्थानों में तीर्थ यात्रियों के संबंध में विवरण को दर्ज करने की परंपरा है। इन दस्तावेजों को विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग नाम से पुकारा जाता है और सदियों से इन्हें व्यवस्थित रूप से दर्ज किया जाता रहा है और अभी भी यही एक जीवित परंपरा के रूप में विद्यमान है। सदियों से तीर्थ वंशावली परंपरा का जीवित रहना ही इस परंपरा के गहने महत्व की और संकेत करता है। इन तीर्थ स्थलों के दस्तावेजों में यात्रियों की कई पीढियां की जानकारी उनके कल के अनुसार लिखी जाती है और अक्सर ही किसी विशेष वंश या परिवार की दस्तावेजों को एक निश्चित पुरोहित द्वारा लिखा जाता है और उसकी मृत्यु के बाद इन दस्तावेजों को उसके वंशज संभाल कर रख ती है। पुरोहितों और तीर्थ यात्रियों की उत्तरोत्तर पीढ़ियों के बीच निरंतर होने वाली प्रक्रिया तीर्थ वंशावली दस्तावेज का रूप लेती है। परिणाम स्वरुप कोई भी इन दस्तावेजों की माध्यम से किसी विशेष परिवार की वंश वृक्ष या उसकी पीढ़ियों की शाखों को चिन्हित कर सकता है। जगन्नाथ मंदिर में तीर्थ वंशावली परंपरा को वरजा या वारिजा कहते हैं।

क्षेत्रीय इतिहास लेखन को लोक साहित्य के रूप में भी जाना जाता है। यहां लोक साहित्य से तात्पर उस साहित्य से है जिसकी रचना जन-सामान्य द्वारा की जाती है। जहां पारंपरिक इतिहास लेखन को राजा,महाराजाओं, धनवानो द्वारा लिपिबद्ध किया जाता था, जिसके केंद्र में अभिजात्य वर्ग रहता था, इसमें सर्वहारा वर्ग की दशा प्रतिबिम्बित नहीं होती है सर्वहारा वर्ग के जन-जीवन के बारे में ऐतिहासिक जानकारी एकत्रित करने के लिए क्षेत्रीय इतिहास लेखन का अध्ययन आवश्यक है। क्षेत्रीय इतिहास के गहन अवलोकन द्वारा हम जन-सामान्य का वास्तविक इतिहास लिख सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. थापर, रोमिला (2003), कलचर पास्ट, दिल्ली ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, प्र.124.

2. सिंह, चेतन (2018), हिमालयन हिस्ट्री, दिल्ली परमानेंट ब्लैक, प्र.6.

3. गैट, सर एडवर्ड (2006), हिस्ट्री ऑफ़ आसाम, नई दिल्ली, प्र. 6.

4. पुरकायस्थ, सुदर्शन (2008), रिस्ट्रक्चरिंग दि पास्त इन अर्ली 20th सेंचुरी असम, रानीखेत, परमानेंट ब्लैक, प्र.173. 5. गुहा, सुमित (2019), हिस्ट्री एंड कलेक्टिव मेमोरी इन साउथ एशिया 1200 से 2000, सिएटल, यूनिवर्सिटी ऑफ़ वाशिंगटन, प्र.83.

6. डॉ. रघुवीर सिंह, डॉ. मनोहर सिंह राणावत (1988) जोधपुर राज्य री ख्यात, भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली.

7. नरोत्तमदास स्वामी (1989),बाकीदास री ख्यात, राजस्थान राज विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर.

8.व्यक्तिगत साक्षात्कार - श्री अमर सिंह बघेल

9. व्यक्तिगत साक्षात्कार - श्री जनक सिंह कुशवाहा